Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVI, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

जनजातीय समाज के लोकगीतों में सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का अध्ययन (शहडोल संभाग के विशेष संदर्भ में)

अमित सिंह भदौरिया*

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – मनुष्य जन्म से पशु प्रवृत्ति का होता है। संस्कृति उसे सामाजीकृत प्राणी में परिवर्तित करती है। साथ ही संस्कृति समाज को भी प्रभावित करती है। 'संस्कृति' शब्द का उद्गम संस्कार शब्द से है। 'संस्कार' का अर्थ उस क्रिया से है जिसमें मनुष्य के दोष दूर होते हैं और वह गुणकारी बनता है। दूसरे शब्दों में कहें तो संस्कृति वह शिक्षा है जिससे मनुष्य के जीवन में सुधार आता है। किसी देश या जाति की संस्कृति का अर्थ उस देश या जाति की वे पुरानी आदतें, प्रथाएं, रहन–सहन, खान–पान, आचार–विचार आदि से है जो देश या जाति के सदस्यों का चरित्र निर्माण करते हैं या उस निर्माण में प्रभावशाली होते हैं। संस्कृति को परिभाषित करते हुए 'मैकाइवर एवं पेज' लिखते हैं कि – 'संस्कृति हमारे दैनिक व्यवहार में कला, साहित्य, धर्म, मनोरंजन और आनन्द में पाये जाने वाले रहन–सहन और विचार के तरीकों में हमारी प्रकृति की अभिव्यक्ति है।'

विज्ञान इतिहासकार 'श्रीनेत्र पाण्डेय' ने अपनी पुस्तक 'भारत का वृहत इतिहास प्राचीन भारत' में संस्कृति के संबंध में लिखा है – 'संस्कृति के दो रूप है। एक आत्मगत और दूसरा समाजगत। आत्मगत संस्कृति में व्यक्ति वैचारिक, चारित्रिक, आध्यात्मिक विकास, विकास के साधन, साहित्य, कला, शिक्षा, धर्म, दर्शन आदि आते हैं। समाजगत साधनों में समाज–व्यवस्था के आधार, नीति, सदाचार, आर्थिक तथा राजनैतिक समाज व्यवस्था आदि आते हैं।'

आम बोलचाल की भाषा में संस्कृति शब्द का प्रयोग इस रूप में होता है कि अमुक परिवार या समाज सुसंस्कृत है और समाज या समुदाय के क्रिया कलाप सांस्कृतिक हैं। अर्थात् जो बाते अच्छी हैं, अच्छे गुण वाली हैं, उपयोगी हैं उन्हें सांस्कृतिक कहा जाता है। साथ ही हमारी या हमारे समाज की संस्कृति अच्छी है तो उसका तात्पर्य मनुष्य के व्यवहार के उस रूप से होता है जो उन्हें अपने पूर्वजों से विरासत के रूप में मिली है जो उनकी सफलता में सहायक है। यहाँ हम गोंड़ जनजाति की सांस्कृतिक स्थिति का उल्लेख करेंगे –

मनुष्य और लोकगीत का चोली दामन का साथ है। संसार का ऐसा कोई स्थान न होगा जहाँ मनुष्य हों और गीत न हो। इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि – 'लोकगीतों की परम्परा इन्सान के आदिम युग से चली आ रही है। युगों की छाप उनके भावों पर पड़ी और वह अपने जीवन को ईमानदारी से अपनी बोलियों में प्रकाशित करता हुआ आज भी विपरीत परिस्थितियों से संघर्ष करता चला आ रहा है। उसने समय–समय पर शोषण के विरूद्ध गीतों में आवाज उठाई, अपने श्रम का परिहार गीतों के सहारे किया, नया उत्साह, नई लगन, गीतों द्वारा प्राप्त की और इतना ही नहीं मन की छिपी हुई मीठी बातों के सुख और दु:ख को उन्हीं गीतों में ढाला।'

जनजातीय सांस्कृतिक अभिव्यक्ति– लोकगीतों में गोंड़ समाज की यथार्थ एवं स्वाभाविक अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। गोंड़ समाज के सुख–दु:ख, हर्ष–विषाद, उत्साह–उल्लास आदि का ज्यों का त्यों रूप हमें लोकगीतों में दिखाई देता है। इसी तरह गोंड़ समाज की प्रचलित प्रथाओं, रीति–रिवाजों आदि का उल्लेख लोकगीतों में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। गोंड़ समाज में नारी को सम्माननीय स्थान प्राप्त है। इन लोगों में देवर–भाभी के बीच किसी भी प्रकार का पर्दा नहीं होता। देवर–भाभी के बीच चुहलबाजी होती रहती है। भाभियों से चुहलबाजी करते हुए देवर ये गीत गाते हैं

'कौन भौजी दार रान्धे कौन भौजी भात।
कौन भौजी रान्धे मुनगा साग।।
छोट भौजी दार रान्धे, बडे भौजी भात।
मझली भौजी रान्धे मुनगा साग।।'

भावार्थ यह है कि बड़ी भाभी, छोटी भाभी, मंझली भाभी सब अलग–अलग सब्जी दाल बनाते हैं कोई मुनगा, कोई अरहर की दाल बनाते हैं। भाभियों से चुहलबाजी के लिए देवर ये गीत गाते हैं।

इसी प्रकार देवर के लिए भी भाभिया हंसी मजाक में गीत गाती हैं। इसी प्रकार एक गीत यहाँ देखा जा सकता हैं हंसी में देवर को जामुन न तोड़ने की बात करती हैं –

'जामूं न टोर देवरा जामूं न टोर।
जामूं न टोर देवरा धोती रची जाए रे
जामूं न टोर देवरा जामूं न टोर।
जामूं न टोर देवरा जिभिया रचि जायरे।
जामूं न टोर देवरा जामूं न टोर।।'

जीवन जीने का लोकगीत –

'तैन तैनैय मोर ना ना री ना ना।
तैयना ना मोर ना ना गा
या जिन्दगी रहेला दिन चार।
मोर ना ना गा या जिन्दगी।।
जरा तो मन लोभय मोर।
रेवा नाव के टूरा रे

या जिन्दगी रहेला दिना चार।।
रेंगें ला सीखय दाऊ।
रेवा नायके टूरा रे
या जिन्दगी.....।।
खेले ला सिखय दाऊ।
रेवा नायके टूरा रे।
या जिन्दगी .....
नाचे ला सीखैय दाऊ।
रेवा नावके टूरा।।
या जिन्दगी रहे ला दिना चार।'

यह जिन्दगी चार दिनों की है। चार दिन की चाँदनी फिर अँधेरी रात है। इस दुनिया में चार दिन तक रहना है नर्तक जो रेवा नाम का लड़का है उससे कहा जा रहा है। अब सभी नृत्यों को मिलाकर नाच नाचना हैं इसलिए हम सब चलना सीखे। आजू-बाजू मुड़ने को पैरों को घुमाकर भुजाओं को हिलाकर नाचना सीख लें। ताकि हम सब नाच गाने में होशियार हो जायेंगे। क्योंकि यह जिन्दगी चार दिनों की है।

जनजातीय श्रृंगारिता का लोकगीत –

'चकिया मा मलथे पीसान सान्वर धीरे रेंगो रे।
गोड़े मा तो रूच मुच पनही।
कनिहा मा पीतम्बर धोती छातीया मा राग झोली।
गले मा तो तुलसीक माला।
मुड़े मा तो टीला टोपी कटरे।
वनगुला पान बिचगली।
मिलही करे सान्वर धरे रोंगो रे.....।।'

चकिया में अनाज पीस कर आटा निकालते हैं पद का भावार्थ यह है कि पांव में जब जूता पहनते हैं तो चुर मुर की आवाज आती है। राह चलते पीली धोती पहने हुए झोला गले में सिर में टोपी पहने हुए कहीं जाते हैं। मूल भावार्थ यह है कि जब ये किसी गांव में जाते हैं। तब पुरूष वर्ग के श्रृंगार वेश-भूषा पहने हुए निकलते हैं। यह जाति श्रृंगार प्रिय होती है। श्रृंगारिता का वर्णन प्रस्तुत लोकगीत में किया जाता है।

गोदना गीत – गोंड़ समाज में गोदना की प्रथा पाई जाती है। यह प्रथा अब लगभग बंद होने की स्थिति में है। गोदना गोदने का कार्य बादी समाज की स्त्रियाँ करती हैं। ये महिलाएँ गोदना गोदते समय गीत गाती हैं। ऐसा वह शायद गोदना गुदने के समय उत्पन्न असहनीय दर्द को सहने की शक्ति के लिए करती हैं। इस तरह देखा जाय तो गोदना गीत का कितना सामाजिक महत्व है जो गोदना गुदने के समय होने वाले दर्द को भी दूर कर देता है। गोदना गीत इस प्रकार गाये जाते हैं –

1. 'दादर ऊपर चार पके कौआ रेरी दे
जा तो बाई पूछ आबे सोला पैसा मा दे,
दादारे मा घोड़ा ऊपर तलवारेय'
2. 'तिल्ली के तेलमा पोर्यौ ठेठरिया
बांधी गठरिया चढ़ी जाबे
चढी जाबे लाला कोसुम घटिया।
चढ़ी जावे रे।।'

जनजातीय माँ-पुत्री स्नेह लोकगीत – गोंड़ समाज के पारिवारिक संबंधों के बीच मधुर एवं कटु दोनों ही प्रकार के संबंध देखे जा सकते हैं। माता एवं पुत्री के प्रेमपूर्ण रिश्ते लोकगीत में महत्वपूर्ण रूप से प्रस्तुत किये जाते हैं। गोंड़ माताओं का स्नेह पुत्र की तुलना में पुत्री से ज्यादा होता है। पुत्री की शादी के बाद बिदाई के अवसर पर माता का हृदय द्रवित हो उठता है –

'आज मोरी दुलरी ससुराल चली री।
मैके की सुध बुध बिसार चली री।।
नैन कजरवा मिला हुई गै।
अंसुवन से ढरकाय चली री।।'

गोंड़ माताएँ पुत्री ससुराल में पुत्री को कष्ट होने पर परेशान एवं दु:खी हो उठती हैं। वे सदैव उसकी खुशी के लिए ईश्वर से प्रार्थना करती हैं। तभी तो बिदाई के समय वे गा उठती हैं –

'मैके ला छोड़ अब ससुरे बसेरा।
मैके से नाता तोड़ चली री।।
हम सबकी ये मनसा गुँइया।
फूलै फरै कचनार कली री।।'

माता एवं पुत्री के समान ही गोंड़ भाई एवं बहन के विशुद्ध, निश्छल, सात्विक प्रेम का वर्णन लोकगीत में उपलब्ध होता है। बहन की ससुराल में भाई के जाने पर बहन हृदय से आवभगत करती है। वह भाई को विभिन्न स्वादिष्ट व्यंजनों के साथ भोजन कराती है। अनेक लोकगीतों में बहन की प्रसन्नता और भ्रातृ स्नेह की सच्ची झाँकी उपलब्ध है।

जनजातीय प्रेम लोकगीत – गोंड़ जनजाति के युवक-युवती को प्रेम की अभिव्यक्ति अनेक लोक गीतों में देखने को मिलती है। किशोरावस्था के बाद तरूणाई की प्रथम रेखा फूटते ही गोंड़ जनजाति के युवक लड़कियों पर नजर गड़ाना शुरू कर देते हैं। वह तिल के तेल से अंगों में कान्ति ले आने वाली गोंड़ युवती से मिलने को आतुर हो उठता है-

'तिल्ली के तेल लगाय ले अंग मां
मोला संगी बना के सोवाय ले संग मां।।'

इसी प्रकार जब युवक को युवती अपनी प्रीति देने को तैयार नहीं होती है तो उसकी प्रीति पाने के लिए युवक देवताओं को नारियल चढ़ाने की मनौती करता है –

'परबत पहार निकट हरियर।
नहि बोले करेली बदों नरियर।।'

जनजातीय आभूषण प्रियता लोकगीत – आभूषण प्रियता नारी का स्वभाव है। गोंड स्त्रियाँ भी इस से मुक्त नहीं हैं। आभूषण प्रिय पत्नी अपने पति से हर्रा बेंचकर हाथ का कंगन और बैल बेंचकर करधनी ला देने की प्रार्थना करती है –

'हर्रा बिकन हर्रइया लइदे।
दोनों बैला बिकन के करधनियाँ लइदे।।'

मद्य निषेध गीत – जनजातीय समाज में शराब एक समुदाय - स्वीकृत पेय है, परंतु शराब की अधिकता शरीर और धन का विनाश भी करती है। इस लोक गीत में शराब के दुष्प्रभावों से बचने का आव्हान किया गया है –

'मान ले तैं कहना बोली धर ले ध्यान गा
या दारू के नशा बरबाद रे
छोड़ा लैका ज्वान भैया पड़त हों मैं पांव गा
या दारु के नशा बरबाद रे
रमकत है तेमे तन ला तोर चुरही गा
पीके चूर हय गै नशा मोर

जोश ला बढ़वावत है तोर पोल ला खुलवावत है
नशा मा बिगड़ जावे रे
मान ले तैं कहना बोली धर ले ध्यान गा
नंई है चिन्हारी तोर बेटी महतारी गा
नंई है चिन्हारी घर दुवारी रे
नशा में चूर हो गय घर ले-तय दूर हो गये
दूसर हो गये घर रखवारी रे,
मान लेते कहना बोली धरले ध्यान गा
या दारु के नशा बरबाद गा
पानी जैइसे बहाय जावे, लकड़ी जैइसे तन जल जाही रे
लाहनी फेंकथें जैसे तन फिक जाही गा
या दारु के नशा बरबाद रे।।'

हे भाई मेरी कही बातों को मान लो। यह शराब का नशा आदमी को बरबार कर देता है। लड़कों और जवान भाईयों मैं आपके पैर पड़ता हूँ। आप शराब पीना बंद कर दो। शराब पीने से शरीर का खून जल जाता है। शराब पीने से आदमी नशे में हो जाता है, जिससे उसकी पोल खुल जाती है। तुम नशा करके बिगड़ जाओगे। हे भाई ! तुम मेरी बात मान लो शराब पीने के बाद आदमी अपने घर द्वार को भूल जाता है। नशे में मदहोश आदमी अपने घर से दूर हो जाता है। उसके घर की रखवाली दूसरे लोग करने लगते हैं। इसलिए हे भाई ! तुम मेरा कहना मान लो। शराब मत पियो शराब पीने से तुम इतने दुर्बल हो जाओंगे जिससे तुम्हारा शरीर पानी जैसे बहने लगेगा। तुम्हारा शरीर लकड़ी के समान जल जायेगा। जिस प्रकार शराब बनाने के बाद उसका लाहन फेंका जाता है, उसी प्रकार एक दिन तुम्हारा शरीर नष्ट हो जायेगा। वह शराब का नशा तुमको बरबाद कर देगा।

जनजातीय पर्यावरण सुरक्षा के गीत –

'नदिया के दूर सिर में धुतिया पछारो।
अरजाय अरझाय ओ जामुन के डार।।
वारे लाने ओ दाई ओ मोरे छुरी कटारी।
अर जाय काटो ओ जामुन के डार।
नै जाय बाई तोर छुरी कटारी।।
अर नहीं काटस ओ जामुन के डार।।'

बेटी तू ससुराल जा रही है, आज से तू हरे-भरे पेड़ – पौधों को नहीं काटेगी बिना सोचे बिचारे इन घातक हथियारों से वृक्षों को नहीं काटेगी। तुम जामुन के पेड़ों को नहीं काटोगी। आज तक जो गलती की भी है उसे नहीं दुहरायेगी।

इन पंक्तियों में कितना महान संदेश विद्यमान है। आज जो पर्यावरण की सुरक्षा एवं मानव जाति के अस्तित्व की रक्षा हेतु प्राकृतिक संतुलन बनाये रखने की मुहिम चलाई जा रही है। गीत में नदी से अलग कपड़े धोने और पेड़ों को न काटने का संदेश है। जल प्रदूषण और पर्यावरण संरक्षण की भावना का एक अत्युत्तम उदाहरण है। पर्यावरण चेतना के बीज लोक में अनादि काल से विद्यमान हैं। यह इस बात का प्रमाण हैं।

जनजातीय सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के अन्य गीत –

'तारि ना ना री तरि ना ना गा पनिया ला।
पनियाला मैया जाबो लहरिया गा।।
आगू-आगू टूरी जाथैय पाछू ले टूरा गा।
मारैय नजुरिया मिलाय के लहरिया गा।।
एक डग रेंगय दूसर डग रेंगय लागैय गा।
छैला अफट गिरि जाय लहरिया गा।।
झिरिया के पानी झीकी के झीका होय लागैय गा।
नयना मा नयना मिलायके लहरिया गा।।'

पानी भरने जल्दी जाना है। आगे-आगे लड़की जा रही है। पीछे से लड़का जा रहा है, लड़की आँखों से इशारा करती है। एक दो कदम चलकर लड़का फिसलकर गिर जाता है और तुरन्त उठकर पानी भरने जाता है। छोटे और कच्चे कुँआ से दोनों एक साथ पानी खींच रहे हैं व नजर से नजर मिलाकर दोनों एक दूसरे को देख रहे हैं।

'तरि हरि नाना, नाना गे।
नाचैय मुरलिया, बोलैय मुरलबा टेघें-टेघें।।
अदक फदक होबैय रेबा परेबा।
गुम गुटर नाचैय मुरलिया.....टेघें।।
झुकी-झुकी आबैय कारी कोयलिया।
कुहू-कुहू के नाचैय मुरलिया.....टेघें।।'

इधर तरि हरि ना ना नाना के बोलों से सैला लहकी नृत्य हो रहा है उधर मोर की आवाज टेघें-टेघें बोलते ही मोरनी नाच उठती है। मोर की आवाज से कबूतर पंखों को फड़फड़ाते हुए गुम-गुटर गे की आवाज बोलने लगते हैं। काली कोयलिया पक्षी झुकी-झुकी याने चोरी-चोरी आती है। मोर की आवाज को सुनकर कुहू-कुहू की आवाज में बोलने लगती है।

'री रीना री ना मोरी भाय।
कुंजन के पेड़न मा फूल बरसे।।
गोड़य के बिछिया तोर, हिसल परी, फिसलपरी।
बिन्दी चमक परी, भुजा लरख परी तोर भाई।।
मूड़ गघरी, छिटकपरी मोर बहनी ले।'

भाभी अपने छोटे देवर से कह रही है कि तुम मेरे लिए बिछिया करधन खरीद दो। देवर कहता है – भाभी तुम कहाँ जाओगी तुम तो तीतर पक्षी के छोटे से बच्चे (तीतुल छौना) जैसे रही हो और कभी यहाँ वहाँ नहीं गई हो। भाभी कहती है – देवर मैं अपने मायके जाऊँगी क्योंकि मुझे मायके से आये बारह वर्ष हो गये हैं अत: मेरे लिए पायल, करधन खरीदकर ले आईये। इनको पहिनकर मैं अपने मायके जाऊँगी।

'सिल सिला नदी बहे निराझार निरमोहिला,
निमोहिला भाई रे, घर मां हैय जुग जोड़ी।
बन मा पिरित जौरैय रे।
गयेला बाजार लैये ला अयना।
देखत रहितो तोरैय तो धैयना।
जरवा ला काटैय छड़ी के छड़ी
बात ला बतावे कड़ी के कड़ी
सिल ..... जोरैय रे।।'

जनजातियों के लोकगीत हमारी स्मृतियों को ताजा कर देते हैं। इन लोकगीतों में जनजातियों के समाज की समस्त भावनाएँ विद्यमान हैं। लोक गीतों के माध्यम से हम जनजातीय लोगों के जीवन शैली को समझ सकते हैं। इनके खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार, भाषा आदि सभी पहलू की स्पष्ट झलक लोकगीत में हमें स्पष्ट दिखाई देती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लोक साहित्य – डॉ. इन्दु यादव, प्रकाशक साहित्य रत्नालय कानपुर

संस्करण सन् 2004
2. लोक साहित्य विज्ञान – डॉ. सत्येन्द्र, शिवलाल अग्रवाल एण्ड प्रायवेट लिमिटेड आगरा सन् 1962
3. सम्मेलन पत्रिका – लोक संस्कृति विशेषांक, 2010,
4. खड़ी बोली का लोक साहित्य – डॉ. सत्या गुप्त,
5. भारत की जनजातीय संस्कृति – विजय शंकर उपाध्याय, विजय प्रकाश शर्मा, प्रकाशक म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, संस्करण 2000।
6. म.प्र. की जनजातियाँ – डॉ. शिवकुमार तिवारी, प्रकाशक–म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, प्रथम संस्करण, सन् 1994
7. लोक संस्कृति – बसन्त निरगुणे, प्रकाशक म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, सन् 2005.

****